AMOGHVARTA

ISSN : 2583-3189

हर्षवर्धन शासन–काल में सांस्कृतिक जीवन

ORIGINAL ARTICLE

Author
उषा कुमारी
शोधार्थी, इतिहास विभाग
विनोबा भावे विश्वविद्यालय
हजारीबाग, झारखंड, भारत

शोध सार

वाण के विवरण से पता चलता है कि वेदों तथा वेदांगों का सम्यक् अध्ययन होता था। हुएनसांग ने पंचविद्याओं–शब्द विद्या (व्याकरण), शिल्पस्थान विद्या, चिकित्सा विद्या, हेतु विद्या (न्याय अथवा तर्क) तथा अध्यात्मक विद्या, का उल्लेख किया है। जयदेव ने हर्ष को भास, कालिदास, वाण, मयूर आदि कवियों की समकक्षता में रखते हुये उसे 'कविताकामिनी का साक्षत् हर्ष' निरूपित किया है। ब्राह्मणों को एवं अन्य धार्मिक संप्रदायों को बड़े पैमाने पर भूमि–अनुदान की परंपरा जो गुप्त काल में शुरू हुई थी वो हर्ष के समय में और बढ़ गई एवं इसके बाद के कालों में लगातार बढ़ती ही गई।

मुख्य शब्द

हर्ष वर्धन, संप्रदाय, सांस्कृतिक.

विवेचना

हर्षवर्धन स्वयं एक उच्चकोटि का विद्वान् था, अपने शासन–काल में उसने शिक्षा एवं साहित्य की उन्नति को पर्याप्त प्रोत्साहन प्रदान किया। पूरे देश में अनेक गुरूकुल, आश्रम एवं विहार थे जहाँ विद्यार्थियों को विविध विद्याओं की शिक्षा दी जाती थी। वाण के विवरण से पता चलता है कि वेदों तथा वेदांगों का सम्यक् अध्ययन होता था। अनेक विद्वद् गोष्ठियां आयोजित होती थी जहाँ महत्वपूर्ण विषयों पर वाद–विवाद होते थे। व्याकरण, पुराण, रामायण, महाभारत आदि के अध्ययन में लोगों की विशेष रूचि थी। हुएनसांग ने पंचविद्याओं–शब्द विद्या (व्याकरण), शिल्पस्थान विद्या, चिकित्सा विद्या, हेतु विद्या (न्याय अथवा तर्क) तथा अध्यात्मक विद्या, का उल्लेख किया है जो बालकों के पाठ्यक्रम का अनिवार्य अंग थी। ब्राह्मण चार वेदों का अध्ययन करते थे। वैदिक विद्यालयों के अतिरिक्त मठ तथा विहार भी शिक्षा के प्रसिद्ध केन्द्र थे।

हर्ष को संस्कृत के तीन नाटक ग्रन्थों का रचयिता माना जाता है– प्रियदर्शिका, रत्नावली तथा नागानन्द। बाणभट्ट के हर्षचरित में उनके काव्य–चातुर्य की प्रशंसा की गयी है तथा बताया गया है कि 'उसकी कविता का शब्दों द्वारा पर्याप्त रूप से वर्णन नहीं किया जा सकता।' अन्यत्र वाण लिखते है कि 'काव्य कथाओं में वह अमृत की वर्षा करता था जो उसकी अपनी वस्तु थी, दूसरे से प्राप्त हुई नहीं', भारत की साहित्यिक परम्परा में कवि के रूप में हर्ष की सत्रहवीं शती तक स्मरण किया गया है। ग्यारहवीं शती के कवि सोड्ढल ने अपने ग्रन्थ अवन्ति सुन्दरी कथा में उसके विषय में लिखा है कि 'सैकड़ों करोड़ मुद्राओं से वाण की पूजा करने वाले वह केवल नाम से ही हर्ष नहीं था, साकार में वाणी (सरस्वती) का हर्ष था'। जयदेव ने हर्ष को भास, कालिदास, वाण, मयूर आदि कवियों की समकक्षता में रखते हुये उसे 'कविताकामिनी का साक्षात् हर्ष' निरूपित किया है। सत्रहवीं शती के सुप्रसिद्ध दार्शनिक

मधुसूदन सरस्वती ने भी हर्ष को रत्नावली नामक नाटक का लेखक स्वीकार किया है। भारतीय साहित्य के अतिरिक्त चीनी यात्री इत्सिग ने भी हर्ष के विद्या–प्रेम की प्रशंसा करते हुए लिखा है कि 'उसने जीमूतवाहन की कथा के आधार पर एक नाटक ग्रन्थ लिखा तथा बाद में उसका मंचन करवाया। इससे उसकी लोकप्रियता काफी बढ़ गयी थी।' इस नाटक से तात्पर्य नागानन्द से लगता है।

प्रियदर्शिका चार अंकों का नाटक है जिसमें वत्सराज उदयन तथा प्रियदर्शिका की प्रणयकथा का वर्णन हुआ है। 'रत्नावली' में भी चार अंक हैं तथा यह नाटक वत्सराज उदयन तथा उसकी रानी वासवदत्ता की परिचायिका नागरकिा की प्रणय–कथा का बड़ा ही रोचक वर्णन करता है। नागानन्द बौद्ध धर्म से प्रभावित रचना है और इसमें पाँच अंक है। इस नाटक में जीमूतवाहन नामक एक विद्याभर राजकुमार के आत्महत्या की कथा वर्णित है।

स्वयं विद्वान् एवं विद्याप्रेमी होने के साथ–साथ हर्ष विद्वानों का उदार संरक्षक भी था। वह विदेशी विद्वानों का भी स्वागत करता था और उन्हें काफी सम्मान पूर्वक अपने साम्राज्य में स्थान देता था। दो विदेशी विद्वान इस काल में भारत आए थे जिन्होंने हर्ष काल के बारे में बहुत कुछ लिखा। हर्ष के समय की सर्वप्रमुख घटना चीनी यात्रा व्हेनसांग (युवानच्वांग) के भारत आगमन की है, व्हेनसांग की जन्म 600 ईस्वी के लगभग चीन के होनन प्रान्त के चीन–लिउ नामक स्थान में हुआ था। उसके पिता का नाम चौन–हुई था उसके चार पुत्रों में व्हेनसांग सबसे छोटा था। उसका पिता एक अध्ययनशील व्यक्ति था जिसका प्रभाव व्हेनसांग के जीवन पर पड़ा। वह बचपन में गंभीर मनोवृत्ति का था। उसे धार्मिक पुस्तकें बड़ी प्रिय थीं। तेरह वर्ष की आयु में वह अपने बड़े भाई के साथ लोयंग के बौद्ध मठ में रहने लगा। इसी समय सुई वंश का पतन हुआ तथा चीनी समाज में अराजकता व्याप्त हो गयी। लोगों की नैतिकता का तेजी से ह्रास होने लगा। फलस्वरूप व्हेनसांग अपने भाई के साथ शान्त वातावरण की खोज में पहले उत्तरी चीन में स्थित चंगन गया। यहाँ से वह हन–चुंग तथा अन्ततोगत्वा चांग–तु नामक स्थान में गया जहाँ वह हुंग–हुई मन्दिर में रहने लगा। यहाँ के प्रान्तीय शासक ने उसका सम्मान किया। यहाँ धर्मग्रन्थों पर उसने व्याख्यान से लोग अत्यन्त प्रभावित हुए। 622 ईस्वी में बीस वर्ष की अवस्था में वह प्रसिद्ध भिक्षु बन गया। यहाँ से वह चीन के विभिन्न स्थानों में बौद्ध सन्तों तथा विद्वानों के पास गया तथा धर्म के गूढ़ प्रश्नों पर उसने वार्तालाप किया उसने अनुभव किया कि चीन में बौद्ध धर्म का पूर्ण अध्ययन संभव नहीं था। उसकी उत्कट् अभिलाषा महात्मा बुद्ध के चरण–चिह्नों द्वारा पवित्र किये गये स्थानों को देखने तथा पवित्र बौद्ध ग्रन्थों का उनके मूल भाषा में अध्ययन करने की थी जो उन दिनों भारत में सुलभ थे। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिये 629 ईस्वी में उसने तांग शासकों की राजधानी चंगन से भारतवर्ष के लिये प्रस्थान किया। उत्तरी मध्य एशिया के मार्ग का अनुकरण करता हुआ वह ताशकन्द, समरकन्द, काबुल तथा पेशावर के मार्ग से भारत आया। हिन्दूकुश की पहाड़ियों को पार करने के पश्चात् सर्वप्रथम वह भारतीय राज्य कपिशा पहुँचा। भारत तक पहुँचने में उसे लगभग एक वर्ष का समय लगा। यहाँ से गन्धार, कश्मीर, जालंधर, कुलूट तथा मथुरा होता हुआ वह थानेश्वर पहुँचा। थानेश्वर में कुछ दिनों तक रूक कर जयगुप्त नामक बौद्ध विद्वान् से उसने शिक्षा ग्रहण की। थानेश्वर से मतिपुर, अहिच्छत्र एवं सांकाश्य होते हुए 636 ई. के मध्य उसने हर्ष की राजधानी कन्नौज में प्रवेश किया। कन्नौज से हुएनसांग ने अयोध्या, प्रयाग, कौशाम्बी, कपिलवस्तु, कुशीनगर, वाराणसी, वैशाली, पाटलिपुत्र आदि स्थानों का भी भ्रमण किया। पाटलिपुत्र में प्रसिद्ध विहारों एवं स्तूपों के उसने दर्शन किये थे। पाटलिपुत्र से चलकर वह बोधगया पहुँचा जहाँ उसने बोधिवृक्ष की पूजा की।

637 ई. में व्हेनसांग नालन्दा विश्वविद्यालय गया। यहाँ के कुलपति आचार्य शीलभद्र थे। नालन्दा में लगभग डेढ़ वर्षो तक निवास कर उसने योगशास्त्र का अध्ययन किया। इसके बाद वह बंगाल, उड़ीसा, धान्यकटक (कृष्णानदी के तट पर) होता हुआ पल्लवों की राजधानी कांची गया। कांची से वह आगे नहीं जा सका तथा उत्तर की ओर लौट पड़ा। यहाँ से चलकर वह चालुक्य शासक पुलकेशिन द्वितीय के राज्य मो–हो–ल–च–अ (महाराष्ट्र) में आया। व्हेनसांग पुलकेशिन् की शक्ति की प्रशंसा करता है। उसके अनुसार उसने हर्ष की अधीनता नहीं मानी। महाराष्ट्र से वह भड़ौंच (गुर्जर–राज्य), मालवा तथा बल्लभी आया। बल्लभी के शासाक ध्रुवसेन को वह हर्ष का दामाद कहता है, तत्पश्चात् आनन्दपुर, सुराष्ट्र, माहेश्वरपुर आदि नगरों से होकर व सिन्ध पहुँचा। वह लिखता है कि

सिन्ध देश का राजा शूद्र था, बौद्ध धर्म में उसकी आस्था थी। सिन्ध देश के बाद व्हेनसांग मूलस्थानपुर पहुँचा जहाँ उसने प्रसिद्ध सूर्य–मन्दिर देखे। अपनी यात्रा के दूसरे दौर में व्हेनसांग पुनः नालन्दा आया जहाँ उसने व्याख्यान दिये, अब उसकी ख्याति चारों ओर फैल गयी थी।

ब्राह्मणों को एवं अन्य धार्मिक संप्रदायों को बड़े पैमाने पर भूमि–अनुदान की परंपरा जो गुप्त काल में शुरू हुई थी वो हर्ष के समय में और बढ़ गई एवं इसके बाद के कालों में लगातार बढ़ती ही गई। भूमि–अनुदान के कारण आरंभिक मध्युगीन हिंदू मंदिर और साथ ही साथ जैन और बौद्ध प्रतिष्ठान आत्मनिर्भर आर्थिक इकाइयों के समान काम करते थे। भिक्षु अब प्राचीन शहरों पर निर्भर नहीं रह सकते थे जिनका या तो पतन हो चुका था या जो विलुप्त हो गए थे। जहाँ–तहाँ कुछ शहर कायम थे, और उनमें से कुछ शहरों में, खासकर प्रतिहारों के अधीन राजस्थान और पश्चिमी उत्तरप्रदेश में, माल और मकान पर लगनेवाले करों का एक अंश मंदिरों को दान कर दिया गया था पर कुल मिलाकर बड़े–बड़े धार्मिक प्रतिष्ठानों में भूमि–अनुदानों पर आधारित आत्मनिर्भर अर्थव्यवस्थाएं प्रचलित थीं। हर्षवर्धन के समय में विभिन्न प्रकार की कलायें, शिल्प–संघों में संगठित थी।[9] हर्ष के दरबार में कई विद्वान भी थे। वाण उनमें प्रमुख था जिसने हर्षचरित और कादम्बरी की रचना की। हरिवत एवं जयसेन जैसे विद्वानों को भी हर्ष ने संरक्षण प्रदान किया। प्रयाग में दो नदियों के संगम के पश्चिम ओर एक बहुत बड़ा मैदान था जिसे दानस्थल कहा जाता था। प्रत्येक पाँच वर्ष के बाद छठे वर्ष में हर्षवर्धन अपनी सारी सम्पति दान दे दिया करते थे। दान का यह कार्यक्रम तीन मास तक चलता था। हर्षवर्धन विद्या एवं कला का प्रेमी था। उसने अपनी प्रजा के कल्याण के लिये और देश के सांस्कृति स्तर को उपर उठाने के लिये बहुत सारे कार्य किये। इतिहास में वह अपनी सहिष्णुता, उदारता, दान और विभिन्न प्रतिष्ठानों की स्थापना के लिये हमेशा प्रसिद्ध रहेगा।

निष्कर्ष

उपरोक्त सम्पूर्ण विवरणों से स्पष्ट होता है कि भूमि–अनुदान के कारण आरंभिक मध्युगीन हिंदू मंदिर और साथ ही साथ जैन और बौद्ध प्रतिष्ठान आत्मनिर्भर आर्थिक इकाइयों के समान काम करते थे। भिक्षु अब प्राचीन शहरों पर निर्भर नहीं रह सकते थे जिनका या तो पतन हो चुका था या जो विलुप्त हो गए थे। हरिवत एवं जयसेन जैसे विद्वनों को भी हर्ष ने संरक्षण प्रदान किया। इतिहास में वह अपनी सहिष्णुता, उदारता, दान और विभिन्न प्रतिष्ठानों की स्थापना के लिये हमेशा प्रसिद्ध रहेगा।

संदर्भ सूची

1. कूमार, संतोष दास (1980) *प्राचीन भारत का आर्थिक इतिहास,* बोहरा पब्लिकेशन, इलाहाबाद।
2. चंद्र, विमल पाण्डेय (1980) *प्राचीन भारत का इतिहास,* शिक्षा प्रकाशन, मेरठ।
3. शर्मा, रामशरण (2010) *भारत में राजनीतिक विचार एवं संस्थाएँ,* राजकमल प्रकाशन, इलाहाबाद।
4. पाठक, रश्मि (2003) *प्राचीन भारत का सामाजिक इतिहास,* अर्जुन पब्लिकेशन, हाउस दिल्ली।
5. सिंह, रामवृक्ष (1982) *गुप्तोतर कालीन,* राजवंश प्रकाशन, उत्तर प्रदेश, इलाहाबाद।
6. पाण्डेय, राजबल (2000) *प्राचीन भारत,* विश्वविद्यालय प्रकाशन, उत्तर प्रदेश, वाराणसी।

––==00==––